पर्व विशेष- होली पर्व

# जीवन यज्ञ का पर्व होली

जीवन के चहुँओर उल्लास, आनन्द, सौन्दर्य-सुगन्ध, अपनत्व और आकर्षण से सराबोर वातावरण का पर्याय-प्रतीक है यह होलिका पर्व। मनुष्य, प्रकृति और परमात्मा के अन्तर्सज़्बन्धों की अभिव्यक्ति होली की मिठास और रंगों में समाहित हो सभी दिशाओं को हर्षोल्लास से भर देती है। यह हमारी सनातन यज्ञीय परज़्परा का उल्लास पर्व है।

ऋषि संस्कृति में सब कुछ यज्ञमय है। जीवन, जगत और ईश्वर सब यज्ञमय स्वरूप में प्रतिष्ठित है। सृष्टि में जीवन यज्ञ का प्रारज़्भ अन्न से होता है। अन्न को प्रकृति धारण करती है। प्रकृति के यज्ञ का वरदान अन्न है और अन्न का वरदान जीवन तथा जीवनयज्ञ का वरदान आनन्द है। आनन्द में स्वयं परमात्मा प्रतिष्ठित है जो सभी दुःख, कष्ट, पीड़ाओं का नाश करने वाले हैं। होली पर्व इसी अन्न ब्रह्म से आनन्द ब्रह्म की जीवन यात्रा का उत्सव है। अन्न की पूजा और आनन्द की अभिव्यक्ति-यही होली की दिव्य परज़्परा का संदेश है।

हमारी संस्कृति की पुरातन यज्ञीय परज़्परा में इस महापर्व को नवात्रैष्टि यज्ञ कहा जाता है। खेतों में पके नये अन्न अर्थात् नवान्न की बालियों को यज्ञ में दान करके उसके प्रसाद को ग्रहण करने तथा फाल्गुन शु□ल पूर्णिमा के पूर्णचन्द्र की सुख-समृद्धि हेतु पूजा करने की प्राचीन परज़्परा रही है। अन्न को 'होलक' या 'होला' कहा जाता है। इसी से होलिका शज़्द की उत्पज़ि मानी गयी है। अन्न को अग्नि में यज्ञीय प्रक्रिया से संस्कारित कर ग्रहण करने का यह आदर्श पर्व सृष्टि में जीवन के अस्तित्व को सुख-समृद्धि और आनन्द से भर लेने की मंत्रणा लेकर प्रस्तुत होता है।

हमारे जीवन में अन्न संवाहक है प्राण का, प्राण संवाहक है विचार और भावों की संवेदना का तथा यह भावों की संवेदना-संवाहक है अन्तस्थ प्रसन्नता और आनन्द की। आनन्द की स्थिरता और शाश्वतता ही जीवन और सृष्टि की पूर्णता का रहस्य है। सृष्टि में जीवन का आविर्भाव और जीवन की पूर्णता का मर्म लिए प्रत्येक वर्ष यह पर्व हमें अपने अस्तित्व को आनन्द से भर लेने का सुअवसर लेकर प्रस्तुत होता है। देश-काल-स्थिति की विद्या से जुड़े मर्मज्ञ होली के मर्म को बखूबी जानते हैं और इस पर्व की सार्थकता को सिद्ध भी करते हैं।

होली, दीपावली और महाशिवरात्रि-इन तीनों का साधना जगत में अत्यन्त महज़्व है। ये तीनों क्रमशः जीवन की उत्पज़ि और सार्थकता, शक्ति और उसका वैभव तथा सृष्टि और उसके प्रयोजन के विधानों से सज़्बन्धित हैं। यहाँ होली जीवन की सार्थकता की द्योतक है। सृष्टि में प्रथम पुरुष मनु का जन्म भी इसी दिन हुआ था, इसलिये इस घड़ी को मन्वादितिथि भी कहा जाता है।

भारतीय ज्योतिष की गणनाओं में होली की रात्रि से ही नववर्ष, नवसंवत का आरज़्भ होता है। इसी प्रकार अनेकों मर्म और रहस्य इस महापर्व होली की दिव्य परज़्परा में समाहित है। जिसकी जैसी गति और प्रवृज़ि होती है, वह वैसा ही इस दिव्य पर्व का लाभ ले पाता है।

जनसामान्य की दृष्टि से तो होली का महज़्व इसके पौराणिक, सांस्कृतिक और धार्मिक स्वरूप में सन्निहित है। हमारे प्राचीन शास्त्रों में इस पर्व के उपलक्ष्य में अनेकों आज़्यान एवं दृष्टांत मौजूद हैं। जैमिनीकृत पूर्व मीमांसा सूत्र, कथा से लेकर सूत्र-

साहित्य, नारद पुराण, भविष्य पुराण, श्रीमद्भागवत् आदि ग्रंथों में इस पर्व का उल्लेख है।

राक्षसी ढुंढी का दृष्टांत हो या भगवान कृष्ण का महारास, कामदेव के पुनर्जन्म का आज़्यान हो या शिव की बारात का चित्रण–इन सभी कथानकों का होली पर्व से विशिष्ट सज़्बन्ध है। इनमें भी सर्वाधिक प्रचलित और प्रसिद्ध कथानक भक्त प्रह्लाद और हिरण्यकश्यप का है।

अहंकार और आसुरी प्रवृज़ियों के प्रतीक हिरण्यकश्यप और उसकी बहन होलिका का विनाश एवं भक्त प्रह्लाद की अटूट भक्ति और ईश्वरनिष्ठा की विजय के प्रसंग, इस पर्व को बुराईयों के अन्त और अच्छाईयों की विजय के रूप में मनाने की नूतन प्रेरणा प्रदान करते हैं।

भारत की संस्कृति, समाज और धर्मनिष्ठा में होली शीर्षस्थ पर्व है। हर्षोल्लास का यह पर्व भारतीय समाज की विविधता को एकता–समरसता प्रदान करते हुये सज़्पूर्ण जनमानस का मंगलोत्सव बन जाता है। यह उत्सव देश के विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग नाम–रूपों में प्रचलित है। जैसे ब्रज की होली और बरसाने की 'लठमार होली' पूरे विश्व में प्रसिद्ध है।

मथुरा–वृंदावन में होली का उत्सव पूरे पन्द्रह दिन चलता है। महाराष्ट्र में होली दहन से ले कर पंचमी तिथि तक इसे विशेष रूप से पकवानों के स्वाद और रंगों की बौछार के साथ में मनाया जाता है। कुमाऊँनी परज़्परा में शास्त्रीय रीति से गीत बैठकी आयोजित होती है, बंगाल में ढोल यात्रा, तमिलनाडु में कमन पोडिगई, हरियाणा में धुलेंडी, मध्यप्रदेश में भगोरिया, बिहार में फगुआ, पंजाब में होला महोल्ला का विशेष आयोजन, छज़ीसगढ़ की होरी–लोकगीत तथा गुजरात के आदिवासी समाज के लिए यह एक बड़ा त्यौहार होता है। इस तरह पूरे भारतवर्ष में इसकी अनूठी परज़्पराएँ प्रचलित हैं।

हमारे पड़ोसी देश नेपाल में भी इस पर्व को धूमधाम से मनाने की परज़्परा है। इसके अतिरिक्त विदेशों में प्रवासीजन भी इसे पूरे उत्साह से मनाते और अपनी इस सांस्कृतिक विरासत पर गर्व करते हैं।

वैसे तो लोकप्रचलन में यह पर्व दो दिनों का होता है–प्रथम दिन होलिका पूजन और दूसरे दिन रंग खेलने अर्थात् धुलेंडी का, परन्तु इसकी शुरुआत वसंत पंचमी से ही हो जाती है। जहाँ पर होलिका दहन होता है, उस स्थान पर पहले से ही झंडा स्थापित कर उसके आसपास लकड़ियाँ व गोबर के उपले एकत्रित कर लिये जाते हैं।

इसके उपरान्त फाल्गुनी पूर्णिमा के दिन सायंकाल सभी नगर–ग्रामवासी विधिवत पूजन कर सुख–समृद्धि और खुशहाली की कामना करते हैं तथा रात्रि में इसका दहन करते हैं। इसकी अग्नि में गेहूँ की पकी हुयी बालियों व चने के होले को भूनने तथा प्रसाद रूप में वितरित करने का भी प्रचलन है। यह कृषि प्रधान व्यवस्था में अन्न के सज़्मान एवं स्वागत की दिव्य परज़्परा को दर्शाता है।

दूसरे दिन होलिका दहन की ठंडी राख से धुलेंडी खेल कर तथा आपस में समस्त भेदभाव, मनमुटाव हटा कर रंग, गुलाल लगा कर, गले मिल कर एवं, मिठाईयाँ बाँट कर पूर्ण उत्साह से होली मनायी जाती है। होली के गीतों, रंगों के साथ नाचते हुए लोग, सभी ओर मस्ती और आनन्द से सराबोर वातावरण हमारी संस्कृति को सर्वथा अनूठा और अद्भुत स्वरूप प्रदान करते हैं। राग–रंग में डूबा समाज, रंगों में नहायी संस्कृति और सौन्दर्य–सुगन्धि को धारण किये प्रकृति–सब मिल कर जीवन में एक लौकिक आनन्द की सृष्टि करते हैं। प्रकृति में बसंत और जीवन में आनन्द–इसके सज़्पर्क–सान्निध्य में आने वाला भला कोई अछूता कैसे रह सकता है?

यही कारण है कि दूसरे देशों-संस्कृतियों के लोग भी होली का उत्सव मनाने-देखने भारत आते हैं व इस उल्लास के महापर्व में भागीदारी कर इस अलौकिक आनन्द के साक्षी बनते हैं। ढोल की थाप, मंजीरों की झंकार, फाग, धमार, चैती और ठुमरी का गान, टेसू, चन्दन, गुलाब का रंग, गुझिया, बर्फी, पूये के मिष्ठान, कांजी भांग, ठंडाई का पेय, खीर-पुरी, पूड़ी-कचौड़ी के व्यंजन आदि सब मिल कर हमारे इस सांस्कृतिक महापर्व को पूरी दुनिया में अनूठा और अद्वितीय बना देते हैं। हम सभी का सामूहिक कर्ज़व्य है कि भावी पीढ़ी को अपनी संस्कृति के इस दिव्य पर्व से जुड़ी विरासत के प्रति जागरूक बनाऐं और इसकी महज़ा समझाऐं।

आधुनिकता की चपेट से हमारा यह होलिकोत्सव भी अछूता नहीं रह गया है। धीरे-धीरे इसमें भी अनेक तरह की विसंगतियाँ और कुप्रथाएँ स्थान लेने लगी हैं। जैसे प्राकृतिक रंगों के स्थान पर रासायनिक हानिकारक रंगों का प्रयोग, लोक गीतों-शास्त्रीय रागों के स्थान पर फूहड़ व अश्लील फिल्मी व आंचलिक गानों का गायन, नशाखोरी और कुत्सित चेष्टायें, हास-परिहास के स्थान पर दुर्व्यवहार और लड़ाई-झगड़ा-ये सब ऐसे कारण हैं जो होली जैसे पवित्रता और पुरुषार्थ भरे पर्व को कलंकित बना रहे हैं।

उत्सव बनाने के बिगड़ते हुए स्वरूप को देखकर अब समाज का एक बड़ा वर्ग इससे दूरी बनाने लगा है। अत: आवश्यकता है इस महापर्व को इसकी गरिमा और महज़ा के अनुरूप उत्साहपूर्वक मनाने और इस ओर औरों में जागरूकता लाने की। इसकी शुरुआत अपने ही घर-परिवार और सज़्पर्क क्षेत्र से हो तो यह प्रयास ज्यादा प्रभावी और सार्थक रहेगा।

इस होली पर छोटे-छोटे अनुबन्ध, जैसे बाजार में मिलने वाले रासायनिक रंगों का उपयोग न कर प्राकृतिक रंगों या घर पर बनाये रंगों का उपयोग करना, नशा न करना, पारज़्परिक गीतों-नृत्यों के कार्यक्रमों का आयोजन अथवा उनमें भागीदारी करना, अपने मनमुटाव, ईर्ष्या-द्वेष को त्यागना, फूहड़ता-स्वच्छंदता से दूर रहते हुये सात्विकता और सद्भावना के साथ होली मनाने के लिए संकल्पित होना- यदि इतना सज़्भव हो सके तो निश्चित ही यह महापर्व हमारे जीवन को समस्त कल्मष-कषाय से निवृज़ि प्रदान कर आनन्द और उल्लास से भर देगा।

तब प्रकृति का आनन्द जैसे बसन्त बन कर फूट पड़ता है वैसे ही हमारे भीतर का आनन्द भी चहुँओर सद्भाव-संवेदना को बिखेरता हुआ सार्थकता को प्राप्त कर सकेगा। ❑

**पथ्यमौषधसेवा च क्रियते येन रोगिणा।**
**आरोग्यसिद्धिर्दृष्टास्य नान्यानुष्ठितकर्मणा॥**

**-विवेक चूड़ामणि-५५**

**अर्थात् पथ्य और औषधि का सेवन करने वाला रोगी ही आरोग्य लाभ प्राप्त करते देखा गया है, न कि किसी और के द्वारा किए हुए ( औषधादि सेवन ) कर्म से वह नीरोग होता है। इसी प्रकार आत्म-कल्याण के लिए स्वयं ही प्रयास करना होता है।**